आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शैक्षिक तत्वों की प्रासंगिकता का विश्लेषणात्मक अध्ययन

देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म. प्र.)

की पी–एच.डी.

की उपाधि की पूर्ति हेतु प्रस्तुत

शोध–सार संक्षिप्तिका

वर्ष – 2022

मार्गदर्शक

डॉ. श्रीमती दीपा जैन

प्राचार्य, टैगोर शिक्षा महाविद्यालय,
इंदौर (म.प्र.)

Mob. No. 7693043372

drdeepajain27@gmail.com

शोधार्थी

श्रीमती प्रेरणा जैन

Mob. No. 9406510352

अध्ययन केन्द्र

शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म. प्र.)

विज्ञान नगर के वैज्ञानिक, तेरी प्रयोगशाला विस्मय।
ज्ञान कला में उमड़ पड़ा, सम्पूर्ण विश्व का ही वैभव।।

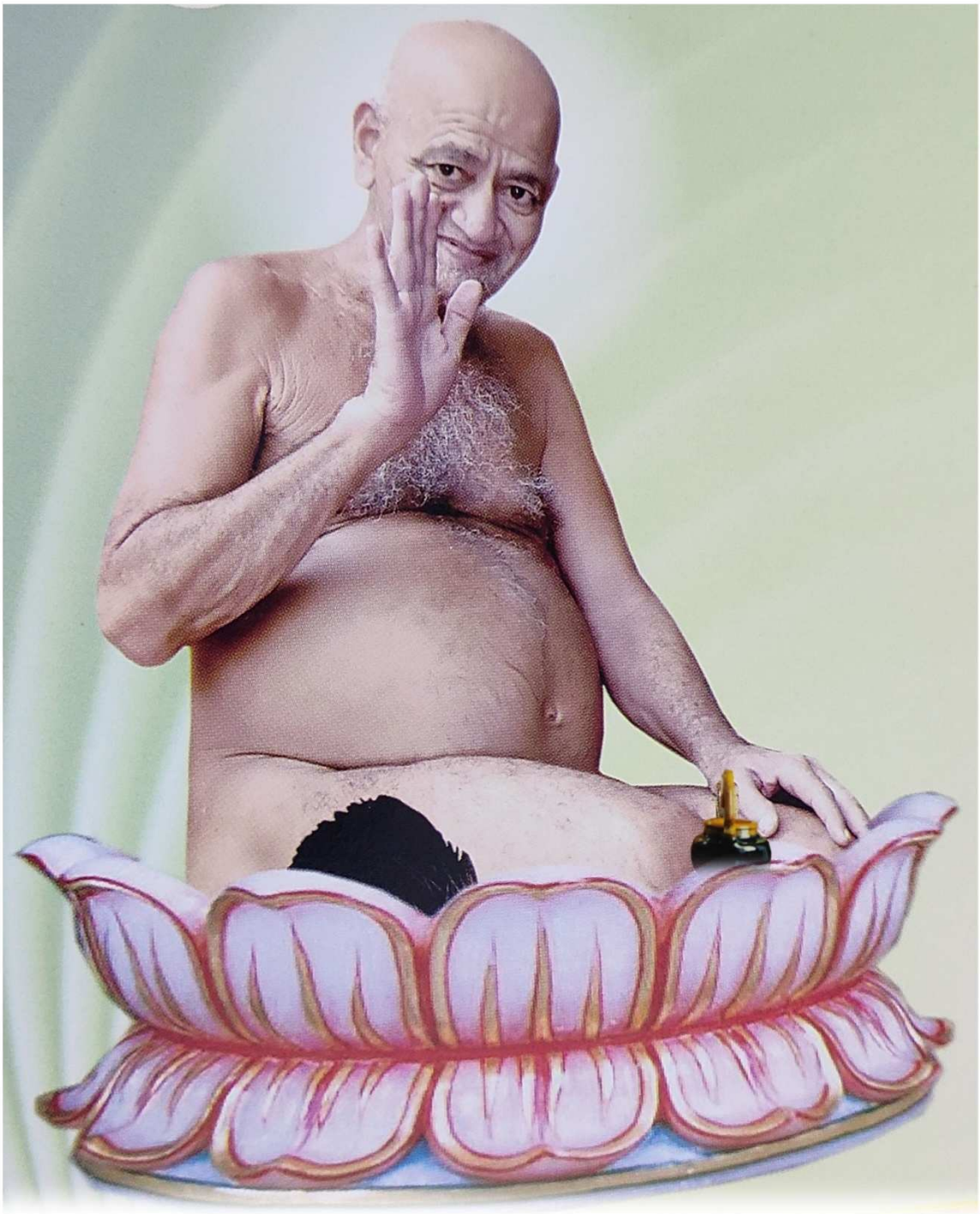

संत शिरोमणि आचार्य विद्यासागरजी महाराज

अनुक्रमणिका

स.कं.	विषय	पृष्ठ संख्या
	भूमिका	0
1.1.0	प्रस्तावना	1
1.1.1	शोध का औचित्य	1–4
1.1.2	शोध–समस्या	4
1.1.3	शोध के उद्देश्य	4–5
1.1.4	शोध–विधि	5
1.1.5	शोध परिसीमन	5
1.1.6	अध्यायीकरण	5–6
1.1.7	शोध–निष्कर्ष	6–11
1.1.8	शैक्षिक निहितार्थ	11–15
1.1.9	भावी शोध हेतु सुझाव	15–16

भूमिका

प्रस्तुत शोध कार्य को शोधार्थी ने निम्नलिखित अध्यायों में वर्गीकृत किया–

अध्याय प्रथम – **प्रस्तावना में–** सम्पूर्ण अध्याय की प्रस्तावना, शोध का औचित्य समस्या कथन, शोध के उद्देश्य, शोध परिसीमन एवं अध्यायों का वर्गीकरण द्वारा शोध कार्यो का स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया।

अध्याय द्वितीय – **संबंधित साहित्य का सर्वेक्षण** प्रस्तुत करके यह देखा की पूर्व में इस प्रकार की समस्या से संबंधित कोई कार्य तो नहीं हुआ है ताकि पुनःपुनरावृत्ति से बचा जा सके और नवीन समस्या पर कार्य संभव हो सके।

अध्याय तृतीय – **शोध प्रविधि** के द्वारा प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों पर प्रकाश डालते हुए शोध विधि को प्रस्तुत किया गया है।

अध्याय चतुर्थ – **आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शैक्षिक तत्वों का अध्ययन (I, II. III. IV भाग द्वारा)** उद्देश्यों का क्रमानुसार विवरण के साथ साहित्य, अर्थापन एवं विश्लेषण व सार प्रस्तुत किया गया है।

अध्याय पंचम – **आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शैक्षिक तत्वों का उद्देश्यानुरूप सार एवं प्रासंगिकता** पर कार्य किया गया है।

अध्याय षष्ठ – इस अध्याय में **शोध निष्कर्ष, शैक्षिक निहितार्थ, भावी शोध हेतु सुझाव एवं शोध सार** का प्रस्तुतीकरण किया गया है।

1.1.0 प्रस्तावना

शोध के सार को प्रस्तुत करने के लिए शोधार्थी ने भूमिका में संक्षेप सभी अध्यायों के बारे में बतलाया। चूँकि शोध कार्य शिक्षा से संबंधित है, तो शिक्षा के बारे में बतलाते हुए वर्तमान में शिक्षा के स्तर की गुणवत्ता में वृद्धि को इस शोध कार्य के माध्यम से आचार्य श्री विद्यासागरजी की साहित्यिक रचना में शैक्षिक तत्वों का सूक्ष्म अध्ययन करके उठाने की पहल कर जनमानस के सामने प्रस्तुत किया **नई शिक्षा नीति (2020) में आचार्य श्री विद्यासागरजी को स्थान देकर उनकी सलाह को मानना एक उभरता हुआ सकारात्मक प्रभाव है। साथ ही शिक्षा की गुणवत्ता में वृद्धि के लिए यह एक नवीन दिशा में सराहनीय प्रयास है।**

आचार्य श्री के शैक्षिक विचारों से देश की शैक्षिक समस्याओं एवं चुनौतियों का निदान व उपचार संभव हो सके, क्योंकि आचार्य श्री की आदर्श शिक्षा पद्धति हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली को पुनर्जीवन प्रदान करने की महती योग्यता रखती है। शिक्षा जगत के लिए आचार्य प्रवर का यह एक अनुपेक्षणीय अवदान है।

1.1.1 शोध का औचित्य

शिक्षा जो संस्कारों की जननी है जो मानव को जीवन जीने की प्रेरणा देती है और सक्षम बनाती है। शिक्षा विकास की प्रक्रिया है, समाज का दर्पण है, सभ्य नागरिक बनाने का महत्वपूर्ण आधार है। वर्तमान समय में शिक्षा युवा पीढ़ी के लिए मात्र जीविकोपार्जन का साधन है। जीविकोपार्जन के साधन के साथ–साथ शिक्षा में नैतिक मूल्यों का समावेश भी नितांत आवश्यक है। नैतिकतारूपी शिक्षा सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण करती है। इसके लिए हमें किसी न किसी संत, महात्मा, महापुरुष के साहित्य का समावेश करना होगा, क्योंकि शिक्षा में आदर्श स्थापित करने, शिक्षा के क्षेत्र में जागरूकता लाने वाले, जो स्वयं शिक्षालय हों, जिनकी कथनी–करनी में अंतर न हो, जिनके अपने अथक प्रयासों से विभिन्न क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन परिलक्षित हो रहा हो, साथ ही विघटित समाज को एक संबल मिल रहा हो। ऐसे महापुरूषों की श्रेणी में आज दिगम्बर जैन संत **आचार्य श्री विद्यासागरजी** का नाम आदर एवं श्रद्धा के साथ लिया जाता है।

आचार्य श्री ने अपने विविध शैक्षिक आयामों को स्पर्श कर दर्शन, चिंतन, मनन द्वारा उत्कृष्ट साधना के बल पर शिक्षा के गिरते स्तर को सुधारने के लिए एक सफल कदम उठाया है, क्योंकि आचार्य श्री श्रेष्ठतम आदर्श संत होने के साथ–साथ उच्चकोटि के साहित्यकार भी हैं। आपका साहित्य धार्मिक, राजनैतिक, दार्शनिक तथा शैक्षिक तत्वों का ऐसा बीजक है जिसे भविष्य में परखते हुए, अतीत से जोड़ते हुए, वर्तमान में जिया जा सकता है। उनके मुख से निर्झरित शब्द शिक्षा मंत्र, वाक्य–वाक्य शिक्षा सूत्र का खजाना है।

आचार्य श्री द्वारा अनेक ग्रंथों की रचना की गई उन्हीं में से "मूकमाटी" भी उभरता हुआ महाकाव्य है। आचार्य श्री द्वारा रचित साहित्य सिर्फ धार्मिक कृतियाँ, ग्रंथ या पुस्तक ही नहीं है, वरन् इसमें व्याप्त संवाद और श्लोक में शिक्षा का गहरा सागर मौजूद है और शिक्षा के इस सागर के मोती सभी जगह व्याप्त है। आचार्य श्री का साहित्य बहुत ही विशाल एवं वाङ्मय है। इनके साहित्य एवं आचार्य श्री स्वयं के ऊपर कई शोध कार्य हुए हैं, जारी हैं जिनमे लगभग 1 डी. लिट्, 28 पी–एच.डी., 22 से अधिक लघुशोध प्रबंध हो चुके हैं। उनके साहित्यिक रचनाओं, प्रवचनों में कई शैक्षिक तत्वों का समावेश है। जैसे शिक्षा, पाठ्यक्रम, शिक्षणविधि, उद्देश्य, मूल्यांकन, अनुशासन आदि।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में आचार्य श्री विद्यासागरजी को स्थान देकर उनकी सलाह को मानना एक उभरता हुआ सकारात्मक प्रभाव होकर शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए एक नवीन दिशा में सराहनीय पहल है।

यहीं कारण है कि आज आचार्य श्री की साहित्यिक रचना मूकमाटी को देश के प्रमुख शासकीय एवं अशासकीय विश्वविद्यालय में पाठ्यक्रम के रूप में जोड़ा गया है– **पंडित रविशंकर वि.वि. रायपुर (छत्तीसगढ़)**, **बनारस हिन्दु वि.वि. बनारस (उत्तरप्रदेश), राष्ट्रसंत तुकोजी राव महाराज, नागपुर विद्यापीठ, नागपुर (महाराष्ट्र), सौराष्ट्र वि.वि. राजकोट (गुजरात), बरकतउल्ला वि.वि., भोपाल (म.प्र.), विक्रम वि.वि. उज्जैन (म.प्र.), अटल बिहारी हिन्दी वि.वि. भोपाल, (म.प्र.), देवी अहिल्या वि.वि. इंदौर (म.प्र.), भोजमुक्त वि.वि. भोपाल (म.**

प्र), सरदार पटेल वि.वि., बालाघाट (म.प्र.), सेज वि.वि. इंदौर (म.प्र.) ऐ.के.एस वि.वि. सतना (म.प्र.), श्रीकृष्ण वि.वि. छतरपुर (म.प्र.), एवं हाल ही में मध्यप्रदेश माध्यमिक शिक्षा मण्डल भोपाल के कक्षा 9वीं के पाठ्यक्रम में हिन्दी की पाठ्यपुस्तक में कविता **स्वाभिमान** के रूप में समाविष्ट किया गया है।

आचार्य श्री के मूकमाटी महाकाव्य को रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर, बस्तर विश्वविद्यालय, जगदलपुर (छत्तीसगढ़) में पाठ्यक्रम में शामिल किये जाने सम्बन्धी प्रक्रिया गतिमान है।

वर्तमान में शिक्षा जगत में यह संत शिरोमणि आचार्य के रूप में विख्यात है, क्योंकि शिक्षा के क्षेत्र में जुड़े बालक, पालक, शिक्षक, प्राचार्य, प्रशासक, नीति–निर्धारक, पाठ्यक्रम–निर्माता प्रत्येक के लिए आचार्य श्री के शैक्षिक तत्वों को आज जानने की महती आवश्यकता है कि वे वर्तमान में शैक्षिक स्तर में गुणवत्ता लाने के लिए क्या परिवर्तन चाहते हैं? किस प्रकार से बालकों के आचरण में नैतिकता आयेगी ? कैसी शिक्षा हो जिससे पालकों में जागरूकता लाये ? कैसे एक शिक्षक को आदर्शवादी शैक्षिक विचारधारा में ढाला जाये ? इन सभी प्रश्नों के समाधान के लिए शोधार्थी ने आचार्य श्री की साहित्यिक कृतियों में शैक्षिक तत्वों के अध्ययन पर कार्य किया जो कि आज तक नहीं हुआ। अतएव शोध अध्ययन हेतु शोधार्थी ने इस विषय का चयन किया जिसका चयन नवीनता के साथ न्यायसंगत एवं औचित्यपूर्ण है।

भारत की वर्तमान और भविष्य में आने वाली परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अपनी वर्तमान शिक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण परिवर्तन करने की अति आवश्यकता है जो समय के अनुकूल हो। ऐसे में आचार्य श्री और उनका शिक्षा दर्शन इस वर्तमान शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन लाने में स्पष्ट रूप से संभव हो सकता है।

शोधार्थी को पूर्ण विश्वास है कि यदि आचार्य श्री की साहित्यिक रचनाओं में शैक्षिक तत्वों की प्रासंगिकता को वर्तमान पाठ्यक्रम में स्थान मिलता है, तो निश्चित ही हमारे देश की प्रगति एवं विकास संभव है।

1.1.2 समस्या कथन

आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शैक्षिक तत्वों की प्रसांगिकता का विश्लेषणात्मक अध्ययन।

1.1.3 शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं –

1. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शिक्षा की संकल्पना का अध्ययन करना।
2. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शिक्षा के उद्देश्य का अध्ययन करना।
3. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शिक्षा के माध्यम की भूमिका का अध्ययन करना।
4. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शिक्षा के पाठ्यक्रम का अध्ययन करना।
5. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शिक्षण–विधि का विश्लेषण करना।
6. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में विद्यालय की भूमिका का अध्ययन करना।
7. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शिक्षक की भूमिका का अध्ययन करना।
8. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में विद्यार्थी की भूमिका का अध्ययन करना।
9. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में गुरू–शिष्य संबंध का अध्ययन करना।
10. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में अनुशासन की संकल्पना का अध्ययन करना।

11. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में नैतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
12. आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में मूल्यांकन की संकल्पना का अध्ययन करना।

1.1.4 शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध का प्रकार दार्शनिक है एवं इसकी प्रकृति गुणात्मक है।

प्राथमिक स्त्रोत के रूप में–आचार्य श्री के विपुल साहित्य विशेषतः **मूकमाटी** (हिन्दी में), कृतित्व, व्यक्तित्व परिचायक, कृतियाँ, प्रवचन, ऑडियो–वीडियो कैसेट/सी.डी. (कुल–20) आदि ।

द्वितीयक स्त्रोत के रूप में – वे संबंधित लेख, पुस्तकें, जीवनी आदि जो आचार्य श्री पर अन्य विद्वानों द्वारा लिखी गई हैं; समाचार पत्र–पत्रिकाएँ, जनर्ल्स, ऑडियो–वीडियो कैसेट/सीडी, (कुल–20) टी.वी. आदि में से विषययुक्त विश्लेषण कर उद्देश्यानुसार शैक्षिक तत्वों का क्रमबद्ध संकलन किया गया।

यह शोध कार्य शिक्षा के सैद्धांतिक पक्ष से संबंधित है। अतः विषय वस्तु विश्लेषण विधि का अनुसरण विषय–विशेषज्ञों के मार्गदर्शन में किया गया।

1.1.5 शोध परिसीमन

आचार्य श्री विद्यासागरजी द्वारा शोधार्थी के कार्य की पूर्णता तक लगभग 82 साहित्य रचित है, जिसमें से प्रस्तुत शोध हेतु संबंधित अनुयायियों, शिष्यों, विद्वानों से विचार–विमर्श करके **'मूकमाटी'** महाकाव्य विशेष, परिषह जय शतक, सुनीति–शतक, दोहा–दोहन, जैन–गीता, आत्मानुशासन, नर्मदा का नरम कंकर, डूबो मत लगाओं डुबकी, तोता क्यों रोता?, हाइकू, प्रवचन साहित्य आदि ग्रंथों का चयन किया गया।

1.1.6 अध्यायीकरण

शोध प्रबंध कों निम्नलिखित अध्यायों में समाहित किया गया है।

- अध्याय प्रथम : प्रस्तावना
- अध्याय द्वितीय : संबंधित साहित्य का सर्वेक्षण
- अध्याय तृतीय : शोध–प्रविधि

- अध्याय चतुर्थ : आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शैक्षिक तत्वों का अध्ययन (प्रथम–भाग), (द्वितीय–भाग), (तृतीय–भाग), (चतुर्थ–भाग)
- अध्याय पंचम : आचार्य श्री विद्यासागरजी कृत साहित्य में शैक्षिक तत्वों की प्रासंगिकता एवं विश्लेषण
- अध्याय षष्ठ : सारांश एवं निहितार्थ

1.1.7 शोध निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध कार्य के उद्देश्यवार निष्कर्ष निम्नानुसार हैं –

1. **शिक्षा की संकल्पना** – आचार्य श्री की शिक्षा की संकल्पना संबंधी विचार बहुत ही प्रभावशाली है, क्योंकि उन्होंने शिक्षा के गूढ़ अर्थों को समझाने का प्रयास किया है। उनके अनुसार शिक्षा जीवन का वह पवित्र संस्कार है, जो मनुष्य को मानवतावादी सिद्धांतों पर चलना सिखलाती है। कर्त्तव्य, नैतिकता, उदारता, सेवा, त्याग एवं समर्पण यह सब शिक्षा के संस्कारों का एक परिवार है, जो व्यक्ति के आचार–विचारों को शुद्ध कर उसे हित–अहित का ज्ञान करा के उसे कर्त्तव्यनिष्ठ मानव बनाती है। वे शिक्षा को जानकारी या तथ्यों का संग्रह नहीं, वरन् अंतस् चेतना में सद्गुणों का विकास, कषायों की हानि, राग–द्वेष को कम करके आचरण रूप में धारण करना मानते हैं। उनके अनुसार शिक्षा जीवन का निर्वाह नहीं निर्माण है। आचार्य श्री ने शिक्षा को ज्ञान से बढ़कर उस ज्ञान को सच्चे अर्थों में जीवन में उतारने पर बल दिया और उन्होंने शिक्षा को इंद्रिय ज्ञान से लेकर अतीन्द्रिय ज्ञान व भौतिक जगत से अभौतिक जगत तक विस्तृत कर दिया। यह ही पूर्ण मानव के विकास की चरम सीमा है, जो उसे स्व की पहचान कराती है। इस संकल्पना को सफलीभूत बनाने के लिए आचार्य प्रवर ने शिक्षा में आध्यात्मिकता का मूल मंत्र दिया।

2. **शिक्षा के उद्देश्य** – आचार्य श्री के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य मात्र बुद्धि का विकास कर अर्थ अर्जन की तलाश में लगे व्यक्तियों का निर्माण करना नहीं, वरन मनुष्य को गुण व संस्कार से युक्त मानव का निर्माण करना है, जिससे विद्यार्थी अपने

अंदर के विकारों पर विजय प्राप्त कर अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान सके। नश्वर से अविनश्वर की ओर तथा निर्वाह से निर्माण की ओर जाना ही शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य माना है, जिसकी प्राप्ति के लिए उन्होंने स्वस्थ तन, स्वस्थ वचन, स्वस्थ मन, स्वस्थ धन, स्वस्थ वन, स्वस्थ वतन और स्वस्थ चेतन जैसे सात आधारभूत सिद्धांत निर्धारित किए हैं। जिससे शिक्षा के शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, भावात्मक, नैतिक, आध्यात्मिक आदि सभी विकास के द्वारा सम्पूर्ण उद्देश्यों की प्राप्ति कर विद्यार्थी सम्पूर्ण दृष्टिकोण से सद्विचारी सत्यान्वेषी तथा सेवाभावी बन सकता है।

3. **शिक्षा दर्शन की अवधारणा** – आचार्य श्री के अनुसार शिक्षा दर्शन ऐसा होना चाहिए जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास में बिना बाधा के सहायक रूप से फलीभूत हो क्योंकि दर्शन ही शिक्षा का प्रमुख सिद्धांत है। बिना दर्शन के शिक्षा में कभी पूर्णता नहीं आ सकती। आचार्य प्रवर के साहित्य में जैन दर्शन के अनुसार सम्यक् दर्शन में व्यक्ति का भावात्मक विकास, सम्यक् ज्ञान में ज्ञानात्मक विकास और सम्यक् चारित्र में क्रियात्मक विकास निहित है। शिक्षा दर्शन के द्वारा व्यक्ति दूसरों की बातों को समतापूर्वक सुन और समझ सकेंगें। आचार्य प्रवर के शिक्षा दर्शन के द्वारा पांच महाव्रतों को धारण करके सम्पूर्ण मानव बनने की एक अनूठी पहल कर सकेगें।

4. **शिक्षा का पाठ्यक्रम** – आचार्य श्री ने शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यापक पाठ्यक्रम की आवश्यकता पर बल दिया है। उनके अनुसार पाठ्यक्रम इतना व्यापक एवं सुदृढ़ होना चाहिए कि उससे विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास संभव हो सके। वे चाहते हैं शिक्षा जीवनोन्मुखी हो, इसलिए उन्होंने मात्र सीखने पर ही नहीं बल्कि क्रियाओं पर भी बल देते हुए परिश्रम की महत्ता को स्वीकार किया है। पाठ्यक्रम में जीव और जगत को केन्द्र बनाकर सम्पूर्ण प्राणीमात्र को और जगत के विषयों को समाहित करकें लौकिक के साथ परलौकिक दृष्टि को ध्यान में रखते हुए, भौतिक विषयों के साथ धर्म, दर्शन और संस्कार प्रदान कराने वाली नैतिक शिक्षा को प्रमुख स्थान दिया है। अतः इनके समन्वय से ही, संतुलित व्यक्तित्व का विकास होता है। उनके अनुसार शिक्षा मातृभाषा में होनी चाहिए, क्योंकि इससे छात्र को अपने कार्यो को करने में सरलता महसूस होती है।

5. **शिक्षण विधि का प्रत्यय–** शिक्षण विधि को आचार्य प्रवर ने मात्र विषयवस्तु प्रदान करने का साधन या पाठ्यक्रम की प्रक्रिया न मानकर उसे एक कला माना हैं, जिससे हर विषय के अर्थ की गहराई का यथार्थ ज्ञान होता है। उन्होंने ऐसी विधियों को प्राथमिकता दी जो पाठ्यक्रम को सरल एवं बोधगम्य बनाने में सहायक हो। उनकी विधियाँ लौकिक ज्ञान के साथ परलौकिक ज्ञान तथा विद्यार्थी के आध्यात्मिक विकास में सहायक सिद्ध होती हैं। वे प्रत्यक्ष एवं परोक्ष दोंनो विधियों को मान्यता देते हैं। उन्होंने प्रत्यक्ष विधि, कथा प्रणाली, सूत्र प्रणाली, स्वाध्याय विधि, शोध विधि, चिंतन विधि एवं व्याख्यात्मक विधि को प्रमुखता दी है। ये विधियाँ अर्न्तमानवीय संबंधों को श्रेष्ठ बनाने एवं लोकतांत्रिक मनोवृत्तियों के विकास में सहायक सिद्ध होती हैं।

6. **विद्यालय संकल्पना –** आचार्य श्री द्वारा विद्यालय को उपाश्रम की उपमा देना बहुत ही सुंदर कल्पना हैं, जो कि स्वाधीनता, सक्रियता, सार्थकता, व पवित्रता का प्रतीक है। वे उसे मंदिर की भाँति एक पवित्र स्थान व आध्यात्मिक केंद्र मानते हैं। संस्कार व संस्कृति के पूंजीभूत इस उपाश्रम में विद्यार्थी, जीवन के शाश्वत मूल्यों को प्राप्तकर अपना उच्चतम विकास करता है। उनका कहना है कि विद्यालय का निर्माण शहर की भौतिकता से दूर, सुंदर, शांत, मनोरम एवं प्राकृतिक स्थान में होना चाहिए, क्योंकि उनके अनुसार कक्षा तो वृक्ष के नीचे भी लग सकती है, अतः भवन एवं साज–सज्जा नहीं, वरन् शिक्षक–शिक्षार्थी के सकारात्मक संबंध ही श्रेष्ठ विद्यालय की विशेषता है। साथ ही विद्यालय को एक प्रयोगशाला भी कहा है जिसमें पाठ्यपुस्तकों के सूत्रों एवं नियमों को रट कर परीक्षा देने तक सीमित नहीं रखा जाता, बल्कि उन्हें व्यवहार में उतारने की शिक्षा दी जाती है। तपोवन की परंपरा जो गुरुकुल में पनपी थी, जो आज विलीन हो गयी है, जिसे वे रुको अब लौट चलें की परंपरा में पुनः प्रतिष्ठा दे रहे हैं।

7. **शिक्षक का प्रत्यय** – आचार्य श्री ने शिक्षक को चेतन कृति (सजीव प्राणी) का निर्माणकर्ता माना हैं। अतः शिक्षक का आचरण शुद्ध, पवित्र व अनुकरणीय होना चाहिए, उसे ज्ञान, कौशल, उत्साह, देशभक्ति, सशक्त चरित्र जैसे गुणों से समन्वित होकर शिक्षण कार्य के प्रति मन, वचन व काया से पूर्णतः समर्पित होना चाहिए, ताकि शिक्षण कार्य, शिक्षक के लिए अर्थोपार्जन या व्यावसायिक कर्म न होकर ज्ञान दान का सात्विक

कर्म हो। आचार्य प्रवर के अनुसार शिक्षक को अल्प आरंभी, अल्प परिग्रही, शांत, प्रसन्नचित्त, गंभीर, प्रश्नसहा, चरित्रनिष्ठ व निष्पक्ष होना चाहिए। इन आदर्श गुणों में ढला एक श्रेष्ठ शिक्षक ही शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक तथा अपने कार्य के प्रति संतुष्ट होता है।

8. **विद्यार्थी की अवधारणा** – विद्या ही जिसका प्रयोजन है वह विद्यार्थी है की सूक्ति के रचित आचार्य श्री कहते है विद्यार्थी गमले का नहीं धरती का पौधा हैं, जिसके संस्कारों की जड़े इतनी गहरी हों कि भौतिकता की चल आँधी उसे विचलित न कर सकें और वह एक दिन विशाल वटवृक्ष के रूप में परिणित होकर सबको छाया प्रदान करने वाला बने। आचार्य श्री के अनसार विद्यार्थी देश के भावी कर्णधार है, इसीलिए उनमें संस्कार एवं नैतिक मूल्य बचपन से ही डाल देना चाहिए, क्योंकि जीवन के संस्कार ही भविष्य का निर्धारण करते हैं। अतः एक आदर्श विद्यार्थी को विनयवान, विवेकवान, कर्त्तव्यनिष्ठ, चरित्रनिष्ठ अनुशासित, सतत् अभ्यासी एवं व्यसनमुक्त होकर ब्रह्मचर्य के साथ शिक्षा ग्रहण करने वाला होना चाहिए। विद्यार्थी को शिक्षा को मात्र जीवकोपार्जन का साधन न मानकर सर्वांगीण विकास में सहायक मानना चाहिए, वे चाहते है कि विद्यार्थी को श्रम के द्वारा विद्यार्जन करना चाहिए, साथ ही उसे अपने अंदर उन गुणों का विकास करना चाहिए, जिसके माध्यम से वह भविष्य में आने वाली विपत्तियों का हिम्मत से सामना कर सके।

9. **गुरु–शिष्य संबंध** – आचार्य श्री ने गुरु–शिष्य के संबंध को गहराई से अनुभव किया है इसलिए गुरु–शिष्य के संबंध में उनकी अवधारणा अत्यंत उच्चस्तरीय है। उन्होंने इस संबंध को शब्दों या पुस्तकों तक सीमित नहीं रखा वरन् प्रतिक्षण जिया है, शिष्य बनकर भी और गुरु बनकर भी। उनका मानना है कि ये पवित्र संबंध किसी पाठ्यक्रम से बंधे नहीं होते अपितु ऐसे जीवंत उदाहरण है जिससे शिष्य के व्यक्तित्व में निखार आता है और वह सर्वश्रेष्ठ मंजिल को हासिल कर पाता है। उन्होंने गुरु को सर्वश्रेष्ठ स्थान देते हुए कहा है कि गुरु गोविंद तक पहुँचने का मार्ग ही नहीं बताते, वरन् गोविंद ही बना देते हैं। वे गुरु–शिष्य संबंध को दोनों ओर से चलने वाली प्रक्रिया मानते हैं क्योंकि जहाँ एक ओर गुरु अपने ज्ञान के माध्यम से शिष्यों पर उपकार करते हैं वहीं शिष्य, गुरु की आज्ञा का पालन कर अप्रत्यक्ष रूप से गुरु पर उपकार करता

है। यही गुरु–शिष्य संबंध की चरम सार्थकता है, जो शिष्य को अंतिम लक्ष्य तक पहुँचाती है।

10. **अनुशासन की संकल्पना** – आचार्य प्रवर ने कहा है कि 'अनुशासन ही जीवन की शान है। आचार्य श्री ने अनुशासन को जीवन का महत्वपूर्ण अंग माना है जिसका पालन विद्यार्थी एवं शिक्षक दोनों के लिए अनिवार्य बताया है। उनका मानना है कि दोनों के अनुशासित रहने पर ही शिक्षण प्रक्रिया सक्रिय एवं प्रभावी होगी। उनके अनुसार अनुशासन का अर्थ मात्र नियमों के अनुकूल चलना ही नहीं, वरन् कर्त्तव्य पालन, आज्ञा पालन, आत्म संयम आदि गुणों को भी वे अनुशासन मानते हैं। उन्होंने आत्मानुशासन के लिए संयम व नियम को प्रधान तत्व माना है। उनके अनुसार अनुशासन अंदर से प्रकट होना चाहिए, जो इंद्रिय व मन को लगाम दे सके। उनका मानना है कि इस अनुशासन से विद्यार्थी अपने व्यवहार का विश्लेषण कर सही दिशा में अपना विकास कर सकता है। आचार्य प्रवर की विचारधारा लोकतांत्रिक (स्वयं शासन) प्रणाली को मान्यता देती है।

11. **नैतिक मूल्य का प्रत्यय** – मूल्य वह है जो मानव इच्छाओं की तुष्टि करें' के उद्घोषक आचार्य श्री ने शिक्षा में नैतिक मूल्यों की भूमिका को बहुत महत्वपूर्ण बताया है। बिना नैतिक मूल्यों के बालक के चरित्र का विकास असम्भव है। उनके अनुसार शिक्षा के तीन आयाम– शिक्षक, पालक एवं बालक तीनों के प्रयास से ही नैतिक मूल्यों का विकास सम्भव है, इसीलिए एक आदर्श विद्यार्थी को विवेकवान, कर्त्तव्यनिष्ठ, विनयवान, चरित्रनिष्ठ, सतत् अभ्यासी एवं व्यसनमुक्त होकर ब्रह्मचर्य के साथ शिक्षा ग्रहण करने वाला होना चाहिए एवं एक आदर्श शिक्षक को ईमानदार, शांत, प्रसन्नचित, गंभीर, धैर्यवान, चरित्रनिष्ठ एवं निष्पक्ष होना चाहिए। साथ ही एक अच्छे पालक में भी आदर्श एवं नैतिक गुण होने चाहिए तभी शिक्षा का एक सुन्दर त्रिभुज निर्मित होगा। अतएव शिक्षक, पालक एवं बालक तीनों के द्वारा ही शिक्षारूपी जड़े फलीभूत होगी।

12. **मूल्यांकन की अवधारणा** –अपने आप को नापना तोलना ही मूल्यांकन है। आचार्य प्रवर के अनुसार मूल्यांकन भी शैक्षिक प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है। यह शैक्षिक ही नहीं वरन् जीवन की प्रत्येक क्रिया का महत्वपूर्ण अंग है। आचार्य श्री कहते है कि मूल्यांकन याने अपने अंदर की छबि का अंकन होना। यह दो प्रकार से होता है

स्व मूल्यांकन एवं बाह्य मूल्यांकन। स्व याने स्वयं अपना मूल्यांकन अपने द्वारा करना। आचार्य श्री कहते है कि जब व्यक्ति स्वयं का मूल्यांकन अपने स्व से ही कर लेगा तो उसे खुद आत्मबोध होगा और एक अच्छी अनुभूति होगी। वे कहते है कि बिना मूल्यांकन के व्यक्ति में परिवर्तन दिखाई नहीं देता। मूल्यांकन कुछ निश्चित अवधि का नही वरन् सतत अवधि का होना चाहिए। मूल्यांकन हेतु व्यक्तिगत भिन्नता को ध्यान में रखते हुए सभी विषयों को बराबर महत्व देना पाया गया है।

1.1.8 शैक्षिक निहितार्थ

प्रस्तुत शोध के शैक्षिक निहितार्थ निम्नलिखित हैं –

1. **विद्यार्थी वर्ग हेतु –** प्रस्तुत शोध कार्य विद्यार्थियों के लिए उपयोगी है। प्रस्तुत शोध के निष्कर्षों के आधार पर विद्यार्थी शिक्षा के सही अर्थ, उद्देश्यों को समझ सकेंगे और अपने जीवन में एक नवीन परिवर्तन कर सकते है। वे स्वयं में निहित क्षमताओं, योग्यताओं को पहचान कर सही दिशा में आगे बढ़कर अपने लक्ष्य को निर्धारित कर उसे प्राप्त करने हेतु प्रयासरत रहेंगे। वे शिक्षा को मात्र नौकरी का साधन न मानकर अर्थ अर्जन की दौड़ में शामिल न होकर शिक्षा के मार्मिक अर्थ को अपने जीवन में उतार कर सयंमित जीवन जीना सीख सकेंगे एवं अपने जीवन के स्वर्णिम युग को संस्कारित कर एक श्रेष्ठ मानव बन सकेंगे।

2. **शिक्षक वर्ग हेतु** – आचार्य प्रवर की शिक्षक की अवधारणा से प्रभावित होकर शिक्षक अपने शैक्षिक कार्य के वास्तविक उद्देश्य को जान सकते हैं और एक आदर्श शिक्षक बनने की प्रेरणा ले सकते हैं। शिक्षक शिक्षा को एक व्यवसाय की दृष्टि से न देखकर निस्वार्थ भाव से शिक्षण कार्य एवं ईमानदारी पूर्वक कर्त्तव्यों को पालन करेंगें। आधुनिकता व दिखावे से दूर अपने अन्तःकरण को परिष्कृत कर एक अनुशासित व आचरणनिष्ठ शिक्षक के उदात्त गुणों को अपने व्यावहारिक जीवन में ढाल सकते हैं तथा शिक्षा को मात्र नौकरी का जरिया न मानकर ज्ञानदान की एक पवित्र प्रक्रिया बनाकर शिक्षा के क्षेत्र में एक नया अध्याय जोड़कर शिक्षक अपने गिरते स्तर को ऊँचा उठा सकेंगे।

3. **अभिभावकों हेतु –** आचार्य श्री के शैक्षिक विचारों से प्रेरित होकर अभिभावक अपने बच्चों की योग्यता पहचान कर उनकी रूचि के अनुसार उन्हें शिक्षण में सहायता प्रदान कर सकेंगें। वर्तमान समय में अभिभावक बच्चों को पढ़ाते ही इसलिए हैं कि वह धन कमाने योग्य बन जाए। आज अभिभावकों ने शिक्षा को केवल डिग्री, प्रतिशत में रखकर धन कमाने का साधन हासिल कर रखा है किन्तु आचार्य श्री के विचारों से मार्गदर्शित हो बच्चों में मानवता की शिक्षा एवं जीवन के निर्माण की ओर अपने बालकों को संस्कारयुक्त शिक्षा प्रदान कर देश को एक श्रेष्ठ नागरिक प्रदान कर सकेंगें।

4. **प्रशासक वर्ग हेतु –** प्रस्तुत शोध अध्ययन प्रशासकों के पाठ्यक्रम निर्माण हेतु सहायक सिद्ध हो सकेगा। शिक्षा आज तकनीकी ज्ञान, तथ्यों की जानकारी तथा उसके संग्रह से ऊपर नहीं उठ पा रही है, किंतु आचार्य प्रवर की शैक्षिक विचारधारा से अभिभूत होकर प्रशासक शैक्षिक नीतियां, पाठ्यक्रम निर्माण, शिक्षा का माध्यम मातृभाषा, जीवन उपयोगी विचारधाराएं, समस्त विषयों का समावेश, व्यक्तिगत भिन्नता एवं छात्रों की रूचि के आधार पर विचार करके शिक्षा को सरल बना सकेंगें। मूल्यांकन के स्वरूप को केवल तीन घंटे का न रखकर सतत मूल्यांकन की अवधारणा को अपना सकेंगे। शैक्षिक माध्यम को मातृभाषा में परिवर्तित कर शिक्षा को सरल बना सकते हैं। पाठ्यक्रम में आचार्य प्रवर के साहित्य के कुछ अंशों को रखकर उनके विचारों को अपनाकर वर्तमान स्वरूप में गुणवत्ता लाई जा सकती है, साथ ही एक सुयोग्य मानव निर्माण की प्रक्रिया के रूप में शिक्षा का निर्धारण कर सकते हैं।

5. **समाज हेतु** – आचार्य श्री के विचारों के माध्यम से समाज से जुड़े व्यक्तियों को अपनी भारतीय संस्कृति गौरवशाली परंपरा एवं जीवन मूल्यों का भान हो सकेगा तथा भारतीय संस्कृति में पढ़ रहे नकारात्मक विचारों को दूर करने हेतु प्रयत्नशील रहेंगे तथा समाज के उद्देश्यों के अनुसार ही शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण किया जा सकेगा ताकि विद्यार्थियों में अच्छे संस्कारों के साथ अपने आचार–विचार में परिवर्तन दिखलाई देगा और वे समाज के ही नहीं वरन् देश के एक सुसभ्य नागरिक साबित हो सकेंगें।

(6) पाठ्यक्रम निर्माताओं हेतु –

आचार्य श्री के पाठ्यक्रम संबंधी तत्वों से भिज्ञ होकर पाठ्यक्रम निर्माता पाठ्यक्रम की रुपरेखा बनाने में सफल हो सकेंगे। पाठ्यक्रम निर्माता को पाठ्यक्रम निर्माण, शिक्षा का माध्यम मातृभाषा, जीवन उपयोगी विचारधाराएँ, समस्त विषयों का समावेश, व्यक्तिगत भिन्नता एवं छात्रों की रुचि को ध्यान में रखकर क्रियान्वित करने में सरलता महसूस होगी। पाठ्यक्रम में आचार्य प्रवर के साहित्य के कुछ अंशों को रखकर उनके विचारों को अपनाकर गुणवत्ता लाई जा सकती है । पाठ्यक्रम में ऐसी विषयवस्तु हो, जिससे चिन्तन शक्ति का विकास हो। प्रस्तुत शोध कार्य पाठ्यक्रम निर्माताओं को इस हेतु विचार करने को प्रेरित करेगा।

(7) शिक्षक प्रशिक्षणार्थी हेतु –

आचार्य प्रवर के शिक्षक संबंधी तत्वों से अभिभूत होकर शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को अपने मूल्य, कर्त्तव्य एवं जिम्मेदारी का भान हो सकेगा। शिक्षक प्रशिक्षणार्थी एक भावी शिक्षक के रूप में होते हैं, इसलिए उनकी विद्यार्थी और समाज के प्रति विशेष जिम्मेदारी होती है। एक सकारात्मक और सार्थक पहल समाज में महत्वपूर्ण भूमिका के निर्वहन में शिक्षकों–प्रशिक्षणार्थियों का योगदान अति आवश्यक होता है। इस हेतु शिक्षक–प्रशिक्षणार्थियों को आचार्य श्री की शैक्षिक संकल्पना, नैतिक मूल्य, अनुशासन एवं जीवन मूल्यों का ज्ञान हो सकेगा, ताकि वे अपने विकास के साथ–साथ विद्यार्थियों के भावी जीवन के विकास में अपना सार्थक योगदान दे सकें।

(8) विद्यालय हेतु –

आचार्य श्री के विद्यालय के लिये विचार बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। वे गुरुकुल परंपरा के अनुसार विद्यालय की कल्पना से मेल खाते हैं। उनका कहना है कि शिक्षा एवं दीक्षा ये दोनों प्रमुख बिन्दु हैं। विद्यालय अर्थ के लिये नहीं परमार्थ के लिये कार्य करें। विद्यालय, विद्यालय ही रहे विधा का लक्ष्य नहीं है, बल्कि वह विधा का आलम बने ताकि शिक्षा का जो स्तर दिखाई दे रहा है वह भविष्य के लिये उचित नहीं अतएव शिक्षा का व्यवसायीकरण न हो, शिक्षा में व्यवहारिकता हो। आजकल लुभावने एवं आकर्षक विज्ञापनों व्दारा शैक्षिक संस्थाएँ

अपने विद्यालय के प्रचार–प्रसार में अग्रणी हैं। आचार्य श्री का कहना है कि विद्यालय सरस्वती का मंदिर है जहाँ पर संस्कार व संस्कृति के बीजों का रोपण होता है, तो संस्कृति को जागृत करने के लिये मंगल दीप प्रज्जलित करने की आवश्कता है। इसीलिए, आचार्य श्री के विद्यालय संबंधी तत्वों को संज्ञान में लाकर विद्यालय हेतु शिक्षकों एवं संचालकों को नीति, मान, दया–भाव, परमार्थ हेतु कार्य करने की योजना बनाने में मददगार बनाने में प्रयासरत रहना होगा।

(9) नीति निर्धारकों हेतु –

आचार्य श्री के नैतिक मूल्य एवं अनुशासन रुपी तत्वों को जानकर नीति निर्धारकों का यह कर्त्तव्य बनता है कि वे शैक्षिक गुणवत्ता में बढोतरी लाने के लिये शिक्षक चयन प्रक्रिया में ऐसे शिक्षकों का चयन करें जो श्रेष्ठ उपाधि के साथ–साथ नैतिकता, व्यवहारिकता में मूल्यपरक और पारदर्शी हो। उनका दृष्टिकोण समानता, उच्च आदर्शो और पारलौकिक विचारों से समाहित हो, ताकि वे कल के भविष्य रुपी बालक के सर्वांगीण विकास के मार्गदर्शक (शिक्षक) की आधारशिला का चयन सरलता से कर सकें। अतः सामान्य जनमानस में यह जागरूकता आ जाये कि आचार्य श्री के विचारों से नीति निर्धारक अवगत होकर शैक्षिक नीतियों को वर्तमान के अनुरुप ढाल सकेंगे।

(10) मूल्यांकनकर्त्ताओं हेतु

आचार्य श्री के मूल्यांकन संबंधी तत्वों द्वारा मूल्यांकनकर्त्ता गुणवत्ता के आधार पर मूल्यांकन की तरफ ध्यान देंगे। अपनी नीतियों में परिवर्तन के लिये प्रयासरत रहेंगे। मूल्यांकन के स्वरूप को सतत मूल्यांकन की अवधारणा दे सकेंगे। क्रमिक विकास की शिक्षा नीति चल रही जो स्वआश्रित होनी चाहिए। नव सृजन बनाने की जरूरत है। श्रम रहित शिक्षा नहीं, बल्कि श्रम सहित शिक्षा होनी चाहिए। नीति न्याय का अभाव शिक्षा में नहीं होना चाहिए, तभी भारत को शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी बनाया जा सकता है। मूल्यांकन का आधार न केवल शैक्षिक गतिविधियाँ ही हों, बल्कि पाठ्यसहगामी गतिविधियाँ भी हो।

मूल्यांकनकर्त्ताओं को आचार्य प्रवर की मूल्यांकन संबंधी विचारधारा से प्रेरित होकर अपने मूल्यांकन कार्य को मूर्तरुप देने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा, जिससे बालक के आंतरिक और बाह्य दोनों मूल्यांकन पूर्णतः हो सकेंगे।

1.1.9 भावी शोध हेतु सुझाव

भविष्य में किये जाने वाले शोध कार्यो के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत है।

- आचार्य श्री विद्यासागरजी का साहित्य : एक शैक्षिक रचना पर शोध कार्य किया जा सकता है।
- आचार्य श्री विद्यासागर और उनकी साहित्यिक कृतियों में शैक्षिक योगदान का अध्ययन किया जा सकता है।
- वर्तमान शिक्षा प्रणाली और आचार्य विद्यासागर की साहित्यिक कृतियों में शिक्षा प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन के संदर्भ में कार्य किया जा सकता है।
- आचार्य श्री विद्यासागर एवं उनकी कृतियाँ शैक्षिक संवेदना का महाकाव्य इस पक्ष को ध्यान में रखकर भी शोध कार्य किया जा सकता है।
- आचार्य श्री एवं उनका साहित्य वर्तमान युग की एक शैक्षिक विवेचना का अध्ययन किया जा सकता है।
- आचार्य विद्यासागरीय साहित्य का शैक्षिक अनुशीलन पर अध्ययन किया जा सकता है।
- आचार्य विद्यासागरजी कृत साहित्य एक शैक्षिक संसार पर शोध कार्य किया जा सकता है।
- आचार्य श्री विद्यासागर, व्यक्तित्व, कृतित्व एवं शैक्षिक दर्शन का अध्ययन किया जा सकता है।
- जैन दर्शन एवं आचार्य विद्यासागर के शैक्षिक विचार पर अध्ययन किया जा सकता है।

- आचार्य विद्यासागर रचित महाकाव्य/ग्रंथो में शैक्षिक दर्शन का उल्लेखः एक अध्ययन पर कार्य किया जा सकता है।
- वर्तमान संदर्भ में आचार्य श्री के शैक्षिक विचारों का योगदान के संदर्भ में अध्ययन किया जा सकता है।
- आचार्य श्री विद्यासागर के शिक्षाप्रद विचारों का सामाजिक परिवर्तन पर प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है।
- आचार्य श्री विद्यासागर का शिक्षा–दर्शन पर अध्ययन किया जा सकता है।
- आचार्य श्री विद्यासागर रचित साहित्य में अन्तर्निहित शैक्षिक मूल्यों का अध्ययन पर शोध कार्य किया जा सकता है।
- आचार्य श्री विद्यासागर के शैक्षिक विचार का समकालीन शिक्षाविद् (महात्मा गाँधी, विनोबा भावे, विवेकानंद, टैगोर) के शैक्षिक विचारों से तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
- आचार्य श्री विद्यासागर के शैक्षिक दर्शन का समकालीन शिक्षाविद् (महात्मा गाँधी, विनोबा भावे, विवेकानंद, टैगोर) के शैक्षिक दर्शन से तुलनात्मक अध्ययन पर शोध कार्य किया जा सकता है।
- आचार्य श्री विद्यासागर के शैक्षिक चिंतन का समकालीन शिक्षाविद् (महात्मा गाँधी, विनोबा भावे, विवेकानंद, टैगोर) के शैक्षिक चिंतन से तुलनात्मक अध्ययन के संदर्भ में कार्य किया जा सकता है।